

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 12: परीक्षित का जन्म

11 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



अभी माता के गर्भ में ही, ब्रह्मास्त्र की अग्नि से झुलसते हुए, अजन्मे परीक्षित भगवान् के अँगूठे-मात्र तेजोमय रूप का दर्शन करते हैं, जो अपनी गदा घुमाकर उस ज्वाला को शान्त कर रहे हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

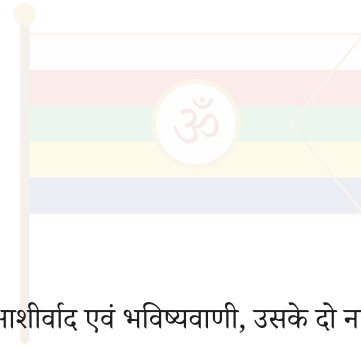
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विजडम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। अष्टम अध्याय में हमने देखा कि सर्वशक्तिमान् भगवान् ने अश्वत्थामा के अमोघ अस्त्र से एक अजन्मे शिशु की रक्षा की। अब यह द्वादश अध्याय हमें बताता है कि वह शिशु किस प्रकार जन्मा — केवल रक्षित ही नहीं, अपितु अपने जन्म से पूर्व ही स्वयं भगवान् के दर्शन से चिह्नित, और उन पवित्र ऋषियों के आशीर्वाद से पालित, जिन्होंने अद्वितीय सद्गुणों के जीवन की भविष्यवाणी की। यह कथा है कि किस प्रकार कुरुवंश का अन्तिम सूत्र एक महान् भक्त बना, किस प्रकार उसे वे दो नाम प्राप्त हुए जिनसे संसार उसे स्मरण करेगा, और किस प्रकार कलियुग को एक दिन अपना दमनकर्ता मिलेगा। यह कृपा का, नामकरण का, और भगवान् की इच्छानुसार मौन नियति के प्रकट होने का अध्याय है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 1 (प्रथम स्कन्ध)
- अध्याय: 12 (द्वादश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: सम्राट् परीक्षित का जन्म
- प्रमुख वक्ता: पूज्य सूत जी, उग्रश्रवा (कथावाचक)
- प्रमुख श्रोता: नैमिषारण्य के ऋषिगण, शौनक जी के नेतृत्व में
- मुख्य स्थल: राजा युधिष्ठिर के शासन में हस्तिनापुर राज्य एवं नगर
- केन्द्रीय विषय: शिशु परीक्षित का जन्म, गर्भ में भगवद्-दर्शन, ऋषियों के आशीर्वाद एवं भविष्यवाणी, उसके दो नाम, तथा युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ
- प्रमुख श्लोक-परास: स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 1-36
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय से सन्दर्भ

एकादश अध्याय में श्रीकृष्ण अपने नगर द्वारका लौटे और वहाँ के नागरिकों तथा अपनी रानियों द्वारा अपार आनन्द से स्वागत किये गये। शोकाकुल कुरुवंश को सान्त्वना देकर और युधिष्ठिर को दृढ़ता से सिंहासन पर स्थापित कर, भगवान् ने यादवों के मध्य अपनी लीलाएँ पुनः आरम्भ कीं। अब द्वादश अध्याय पुनः हस्तिनापुर की ओर मुड़ता है, जहाँ नैमिषारण्य के ऋषिगण, अब भी पूज्य सूत जी के चारों ओर एकत्र, उस शिशु की कथा सुनना चाहते हैं जिसका जीवन गर्भ में ही बचाया गया था।

ऋषियों का बचाये गये शिशु के विषय में प्रश्न

सभा के अग्रणी ऋषि शौनक जी ने विस्मय से भरा प्रश्न पूछकर इस अध्याय का आरम्भ किया। उन्होंने स्मरण किया कि किस प्रकार अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र के प्रचण्ड तेज से झुलसा हुआ उत्तरा के गर्भ का भ्रूण स्वयं भगवान् द्वारा पुनः जीवित किया गया। अब ऋषिगण उस महान् आत्मा का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनना चाहते थे।

शौनक उवाच

अश्वत्थाम्नोपसृष्टेन ब्रह्मशीर्ष्णोरुतेजसा ।

उत्तराया हतो गर्भ ईशेनाजीवितः पुनः ॥ १ ॥

śaunaka uvāca aśvatthāmnopasṛṣṭena brahma-śīrṣṇoru-tejasā । uttarāyā hato garbha īśenājīvitah punaḥ ॥ 1 ॥

अर्थ: शौनक जी ने कहा — अश्वत्थामा द्वारा छोड़े गये ब्रह्मास्त्र के भयंकर तेज से आहत हुआ उत्तरा के गर्भ का भ्रूण भगवान् द्वारा पुनः जीवित कर दिया गया। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 1)

वे उस श्रेष्ठ एवं अत्यन्त बुद्धिमान् आत्मा के जन्म और कर्मों को, उसकी मृत्यु किस प्रकार हुई, और मृत्यु के पश्चात् उसे कौन-सी गति प्राप्त हुई — यह सब सुनना चाहते थे; वही महान् राजा, जिसे एक दिन शुकदेव जी दिव्य ज्ञान प्रदान करेंगे। यदि सूत जी उचित समझें, तो उन्होंने श्रद्धा और उत्सुकता से सुनने वाले उन ऋषियों को यह सब सुनाने की प्रार्थना की।

राजा युधिष्ठिर का धर्ममय शासन

तब सूत जी ने आरम्भ किया। श्रीकृष्ण के चरणकमलों की निरन्तर सेवा से समस्त भोगों की तृष्णा से मुक्त होकर, धर्मराज युधिष्ठिर ने अपनी प्रजा का पिता के समान पालन किया, उन्हें हर प्रकार से प्रसन्न रखा।

सूत उवाच

अपीपलद्धर्मराजः पितृवद् रञ्जयन् प्रजाः ।

निःस्पृहः सर्वकामेभ्यः कृष्णपादानुसेवया ॥ ४ ॥

sūta uvāca apīpalad dharma-rājah pitṛvad rañjayan prajāḥ । niḥspṛhaḥ sarva-kāmebhyah kṛṣṇa-pādānusevayā ॥ 4 ॥

अर्थ: सूत जी ने कहा — धर्म के साक्षात् स्वरूप राजा युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण के चरणों की सेवा से सभी प्रकार के भोगों की कामना से मुक्त होकर, अपनी प्रजा का ऐसे पालन-पोषण एवं रंजन करते रहे जैसे पिता अपने पुत्रों का करता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 4)



श्रीकृष्ण के प्रति भक्ति से समस्त कामना से मुक्त, राजा युधिष्ठिर जम्बूद्वीप पर शासन करते हैं और अपनी प्रजा का एक स्नेही पिता के समान पालन करते हैं (श्लोक 4)।

अगणित सम्पदाएँ उनकी थीं; उन्होंने अनेक यज्ञ किये थे और उच्चतम लोकों में स्थान अर्जित किया था। उनकी पत्नी महारानी द्रौपदी तथा उनके भाई सब उनके प्रति समर्पित थे। उनका आधिपत्य समस्त पृथ्वी पर था, वे जम्बूद्वीप पर शासन करते थे, और उनकी कीर्ति स्वर्ग तक पहुँच चुकी थी। फिर भी ये समस्त भोग, जिनकी देवता भी अभिलाषा करते हैं, राजा को कोई सच्चा आनन्द न दे सके — क्योंकि उनका मन पूर्णतः मुक्ति के दाता श्रीकृष्ण को समर्पित था, ठीक वैसे ही जैसे भोजन के अतिरिक्त कोई वस्तु भूखे प्राणी को तृप्त नहीं कर सकती।

किं ते कामाः सुरस्पार्हा मुकुन्दमनसो द्विजाः ।

अधिजह्नुर्मदं राज्ञः क्षुधितस्य यथेतरे ॥ ६ ॥

kiṁ te kāmāḥ sura-spārḥā mukunda-manaso dvijāḥ । adhijahrur mudam rājñāḥ kṣudhitasya yathetare ॥ 6 ॥

अर्थ: हे ब्राह्मणो, क्या देवताओं तक की अभिलषित वे समस्त भोग-सामग्रियाँ उस राजा को कोई आनन्द दे सकती थीं जिसका मन मुकुन्द में लीन था — जैसे भोजन के सिवा अन्य कोई वस्तु भूखे मनुष्य को तृप्त नहीं कर सकती? (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 6)

गर्भ में दर्शन

अब सूत जी ने ऋषियों को बताया कि उन संकट के दिनों में गर्भ के भीतर क्या घटित हुआ था। ब्रह्मास्त्र की अग्नि से झुलसते हुए, उत्तरा के गर्भ में स्थित उस वीर शिशु ने अँगूठे-मात्र आकार के एक अद्भुत, तेजोमय पुरुष का दर्शन किया।

मातुर्गर्भगतो वीरः स तदा भृगुनन्दन ।

ददर्श पुरुषं कञ्चिद्दृष्टवानोऽस्त्रतेजसा ॥ ७ ॥

mātur garbha-gato vīraḥ sa tadā bhṛgu-nandana । dadarśa puruṣaṁ kañcid dahyamāno 'stra-tejasā ॥ 7 ॥

अर्थ: हे भृगुनन्दन (शौनक), माता के गर्भ में स्थित वह वीर शिशु, अस्त्र के तेज से झुलसते हुए, अपने समीप आते हुए एक दिव्य पुरुष का दर्शन कर रहा था। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 7)

वह पुरुष निर्मल एवं देखने में अत्यन्त मनोहर, श्याम वर्ण का, बिजली-सी चमकते पीत वस्त्रों से युक्त, और स्वर्ण के देदीप्यमान मुकुट से सुशोभित था। उनकी चार लम्बी और सुन्दर भुजाएँ थीं, वे तपाये हुए स्वर्ण के कुण्डल धारण किये थे, और उनके नेत्र रक्तवर्ण थे; एक हाथ में वे उल्का के समान प्रज्वलित गदा लिये हुए थे, जिसे वे बार-बार घुमाते हुए स्वयं शिशु के चारों ओर परिक्रमा कर रहे थे। वे और कोई नहीं, अपितु अच्युत भगवान् ही थे।

श्रीमद्दीर्घचतुर्बाहुं तप्तकाञ्चनकुण्डलम् ।
क्षतजाक्षं गदापाणिमात्मनः सर्वतोदिशम् ।
परिभ्रमन्तमुल्काभां भ्रामयन्तं गदां मुहुः ॥ ९ ॥

śrīmad-dīrgha-catur-bāhuṁ tapta-kāñcana-kuṇḍalam । kṣatajākṣaṁ gadā-pāṇim ātmanaḥ sarvato diśam । paribhramantam ulkābhāṁ bhrāmayantaṁ gadāṁ muhuḥ ॥ 9 ॥

अर्थ: उनकी चार लम्बी एवं सुन्दर भुजाएँ थीं और तपे हुए स्वर्ण के कुण्डल थे; उनके नेत्र रक्तवर्ण थे और हाथ में गदा थी। उल्का के समान प्रज्वलित होकर, वे बार-बार गदा घुमाते हुए शिशु के चारों ओर घूम रहे थे। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 9)

उसी गदा से वे ब्रह्मास्त्र की अग्नि को वैसे ही परास्त कर रहे थे जैसे सूर्य कुहरे को छिन्न कर देता है। गर्भस्थ शिशु उन्हें एकटक देखता रहा और विचार करता रहा कि ये कौन हैं। अग्नि को शान्त कर, श्रीहरि — जो स्वभाव से अनन्त, सर्वव्यापी और धर्म के रक्षक हैं — वहीं, उसी गर्भ के भीतर, अन्तर्धान हो गये, और दस मास का वह अजन्मा शिशु देखता ही रह गया।

विधूय तदमेयात्मा भगवान्धर्मगुब् विभुः ।
मिषतो दशमासस्य तत्रैवान्तर्दधे हरिः ॥ ११ ॥

vidhūya tad ameyātmā bhagavān dharma-gub vibhuḥ । miṣato daśamāsasya tatraivāntardadhe hariḥ ॥ 11 ॥

अर्थ: उस अग्नि को दूर कर, अप्रमेय भगवान् श्रीहरि, सर्वव्यापी धर्म के रक्षक, दस मास के उस शिशु के देखते-देखते वहीं गर्भ के भीतर अन्तर्धान हो गये। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 11)

वंश के रक्षक का जन्म

यथासमय, समस्त श्रेष्ठ गुणों के विकास के लिए अनुकूल घड़ी में, जब आकाश में उदित ग्रह शुभ थे, वह शिशु जन्मा — वही जो पाण्डु के वंश-सूत्र को आगे ले जाने वाला था, शारीरिक बल में मानो दूसरा पाण्डु ही।

ततः सर्वगुणोदके सानुकूलग्रहोदये ।

जज्ञे वंशधरः पाण्डोर्भूयः पाण्डुरिवौजसा ॥ १२ ॥

tataḥ sarva-guṇodarke sānukūla-grahodaye । jājñe vaṁśa-dharaḥ pāṇḍor bhūyaḥ pāṇḍur ivaujasā
॥ 12 ॥

अर्थ: तत्पश्चात्, समस्त सद्गुणों के उदय की सूचक शुभ घड़ी में, जब ग्रह अनुकूल थे, पाण्डु के वंश का धारक जन्मा, जो शारीरिक पराक्रम में मानो पुनः पाण्डु ही था। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 12)



शिशु के जन्म से हर्षित होकर राजा युधिष्ठिर धौम्य और कृप जैसे पूज्य ब्राह्मणों से मंगल-स्तुतियाँ करवाते हैं और जातकर्म सम्पन्न कराते हैं (श्लोक 13)।

हृदय से आनन्दित होकर राजा ने धौम्य और कृप जैसे पूज्य ब्राह्मणों से मंगल-स्तुतियों का पाठ करवाया और विधिपूर्वक जातकर्म-संस्कार सम्पन्न कराया। दान का उचित समय भली-भाँति जानने वाले युधिष्ठिर ने जन्म की पवित्र घड़ी में — नाभि-नाल कटने से पूर्व — ब्राह्मणों को स्वर्ण, गौएँ, भूमि, सम्पूर्ण ग्राम, उत्तम हाथी-घोड़े, और श्रेष्ठ अन्न प्रदान किया।



दान का शुभ मुहूर्त जानते हुए राजा परीक्षित के जन्म की पवित्र घड़ी में ब्राह्मणों को स्वर्ण, गोएँ, भूमि, हाथी और अन्न प्रदान करते हैं (श्लोक 14)।

ब्राह्मणों का आशीर्वाद और विष्णुरात नाम

राजा के दान से प्रसन्न होकर ब्राह्मणों ने विनम्र युधिष्ठिर को आशीर्वचनों से सम्बोधित किया। उन्होंने कहा कि पुरुओं का यह निर्मल वंश दैव की अनुल्लंघनीय इच्छा से लगभग नष्ट हो चला था — फिर भी सर्वशक्तिमान् भगवान् विष्णु ने, आप पर कृपा करने के लिए, इसी शिशु की रक्षा कर उस वंश को सुरक्षित रखा।

तस्मान्नाम्ना विष्णुरात इति लोके भविष्यति ।

न सन्देहो महाभाग महाभागवतो महान् ॥ १७ ॥

tasmān nāmnā viṣṇu-rāta iti loke bhaviṣyati । na sandeho mahā-bhāga mahā-bhāgavato mahān ॥ 17 ॥

अर्थ: इसलिए वह संसार में “विष्णुरात” — अर्थात् “विष्णु के द्वारा दिया गया” — इस नाम से प्रसिद्ध होगा; इसमें कोई सन्देह नहीं, हे भाग्यशाली राजन् — वह भगवान् का महान् भक्त और उन्नत आत्मा होगा। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 17)



विद्वान् ब्राह्मण राजा युधिष्ठिर के समक्ष नवजात शिशु की महानता की भविष्यवाणी करते हैं, यह घोषित करते हुए कि वह विष्णुरात कहलाएगा — भगवान् विष्णु द्वारा बचाया और दिया गया (श्लोक 15-17)।

युधिष्ठिर का प्रश्न और एक श्रेष्ठ जीवन की भविष्यवाणी

तब सदा विनम्र रहने वाले राजा ने सभा के ऋषियों से पूछा कि क्या यह शिशु अपने ही वंश के यशस्वी, उदार-हृदय राजर्षियों के पदचिह्नों पर चलेगा।

श्रीराजोवाच

अप्येष वंश्यान् राजर्षीन् पुण्यश्लोकान् महात्मनः ।

अनुवर्तिता स्विद्यशसा साधुवादेन सत्तमाः ॥ १८ ॥

śrī-rājovāca apy eṣa vaṁśyān rājarṣīn puṇya-ślokān mahātmanaḥ । anuvartitā svid yaśasā sādhu-vādena sattamāḥ ॥ 18 ॥

अर्थ: राजा ने कहा — हे परम सत्पुरुषो, क्या यह शिशु अपने वंश के यशस्वी एवं उदार-हृदय राजर्षियों का यश और सत्पुरुषों की प्रशंसा में अनुसरण करेगा? (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 18)

उत्तर में, नक्षत्र-विद्या में निपुण ब्राह्मणों ने शिशु के भविष्य की एक उज्ज्वल भविष्यवाणी प्रकट की। प्रजा के रक्षक के रूप में वह वैवस्वत मनु के ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु के समान होगा; ब्राह्मणों के प्रति समर्पित और अपने वचन का पालक दशरथ-पुत्र श्रीराम के समान। वह उशीनरों के राजा शिबि के समान उदार और शरणागत का सुनिश्चित आश्रय होगा, और दुष्यन्त-पुत्र भरत के समान अपने जनों का यश फैलाएगा। धनुर्धरों में उसका कोई सानी न होगा, अग्नि के समान अजेय और समुद्र के समान दुस्तर; सिंह के समान वीर, हिमालय के समान आश्रय-योग्य, पृथ्वी के समान सहनशील, और माता-पिता के समान क्षमाशील। समभाव में वह ब्रह्मा के समान होगा, प्रसन्नता में शिव के समान, और स्वयं विष्णु के समान समस्त प्राणियों का आश्रय। समस्त सद्गुणों में श्रीकृष्ण का अनुसरण करते हुए वह रन्तिदेव के समान उदार और ययाति के समान धर्मनिष्ठ

होगा; बलि के समान दृढ़ और प्रह्लाद के समान श्रीकृष्ण में अविचल भक्ति वाला। वह अनेक अश्वमेध यज्ञ करेगा, वृद्धों की सेवा करेगा, राजर्षियों के वंश का जनक और पथभ्रष्टों का दण्डदाता होगा। पृथ्वी और धर्म के हित के लिए, उन्होंने कहा, वह कलियुग के अधिष्ठाता कलि का भी दमन करेगा।

राजर्षीणां जनयिता शास्ता चोत्पथगामिनाम् ।
निग्रहीता कलेरेष भुवो धर्मस्य कारणात् ॥ २६ ॥

rājarṣīṇāṃ janayitā śāstā cotpatha-gāminām । nigrahītā kaler eṣa bhuvo dharmasya kāraṇāt ॥ 26
॥

अर्थ: वह राजर्षियों का जनक और सन्मार्ग से भटकने वालों का दण्डदाता होगा; और पृथ्वी तथा धर्म के हित के लिए वह कलि के प्रभाव का दमन करेगा। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 26)

तत्पश्चात् ब्राह्मणों ने उसके देहत्याग की रीति भी बताई। एक ब्राह्मण-पुत्र के शाप से प्रेरित तक्षक द्वारा अपनी आसन्न मृत्यु का समाचार सुनकर, वह समस्त आसक्ति त्यागकर श्रीहरि के चरणों की शरण लेगा।

तक्षकादात्मनो मृत्युं द्विजपुत्रोपसर्जितात् ।
प्रपत्स्यत उपश्रुत्य मुक्तसङ्गः पदं हरेः ॥ २७ ॥

takṣakād ātmano mṛtyuṃ dvija-putropasarjitāt । prapatsyata upaśrutya mukta-saṅgaḥ padam hareḥ ॥ 27 ॥

अर्थ: एक ब्राह्मण-पुत्र के शाप से प्रेरित तक्षक द्वारा अपनी मृत्यु का समाचार सुनकर, वह समस्त आसक्ति त्यागकर भगवान् के चरणों की शरण ग्रहण करेगा। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 27)

तत्पश्चात्, जब व्यास-पुत्र शुकदेव जी उसके लिए आत्मा के वास्तविक स्वरूप का निर्णय कर देंगे, तब वह गंगा-तट पर इस नश्वर देह को छोड़कर सम्पूर्ण भय से परे, शोक-रहित हो जाएगा।

जिज्ञासितात्मयाथार्थ्यो मुनेर्व्याससुतादसौ ।
हित्वेदं नृप गङ्गायां यास्यत्यद्धाकुतोभयम् ॥ २८ ॥

jijñāsītātma-yāthārthyo muner vyāsa-sutād asau । hitvedam nṛpa gaṅgāyām yāsyaty addhākutobhayam ॥ 28 ॥

अर्थ: व्यास-पुत्र मुनि शुकदेव जी से आत्मा के यथार्थ स्वरूप की जिज्ञासा कर, हे राजन्, वह गंगा के तट पर इस शरीर को त्यागकर उस अभय एवं शोकरहित पद को प्राप्त करेगा। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 28)

राजा को शिशु के भविष्य के विषय में इस प्रकार बताकर, ज्योतिष के ज्ञाता वे ब्राह्मण, सम्मानित होकर, अपने-अपने घरों को लौट गये।

वह परीक्षित क्यों कहलाया

जैसे-जैसे बालक बड़ा हुआ, वह संसार में एक दूसरे नाम से भी प्रसिद्ध हुआ — परीक्षित, “परीक्षा करने वाला।” क्योंकि उसने गर्भ में देखे उस अद्भुत रूप को कभी नहीं भुलाया, और वह प्रत्येक मिलने वाले व्यक्ति की परीक्षा करता रहता, समस्त मनुष्यों में उसी एक को खोजता जिसका उसने कभी दर्शन किया था।

स एष लोके विख्यातः परीक्षित इति यत्प्रभुः ।

पूर्वं दृष्टमनुध्यायन् परीक्षेत नरेष्विह ॥ ३० ॥

sa eṣa loke vikhyātaḥ parikṣid iti yat prabhuḥ । pūrvam dṛṣṭam anudhyāyan parikṣeta nareṣv iha
॥ 30 ॥

अर्थ: वह संसार में परीक्षित नाम से प्रसिद्ध हुआ, क्योंकि पूर्व में देखे उस एक (भगवान्) का सदा ध्यान करते हुए, वह मनुष्यों में मिलने वाले प्रत्येक व्यक्ति की परीक्षा करता, उन्हें ही खोजता। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 30)

वह राजकुमार शीघ्रता से बढ़ा, शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान, जो अपनी कलाओं से भरता जाता है — वैसे ही अपने बड़ों के स्नेहमय पालन से वह दिन-प्रतिदिन परिपूर्ण होता गया।

अश्वमेध यज्ञ और भगवान् का प्रस्थान

इस बीच, युधिष्ठिर अश्वमेध यज्ञ करना चाहते थे, जिससे वे अपने स्वजनों के वध के पाप से मुक्त हो सकें; किन्तु अपना कोष रिक्त कर चुकने के कारण, उन्हें कर और दण्ड के अतिरिक्त धन का कोई स्रोत नहीं सूझ रहा था। राजा के अभिप्राय को समझकर, अच्युत से प्रेरित उनके भाई उत्तर दिशा से प्रचुर धन ले आये।

इस प्रकार एकत्रित धन से, युद्ध के पाप से अब भी आशंकित धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने श्रीहरि को प्रसन्न करने के लिए तीन अश्वमेध यज्ञों का सम्पादन किया।

तेन सम्भृतसम्भारो धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ।

वाजिमेधैस्त्रिभिर्भितो यज्ञैः समयजद्धरिम् ॥ ३४ ॥

tena sambhṛta-sambhāro dharma-putro yudhiṣṭhiraḥ । vājimedhais tribhir bhīto yajñaiḥ
samayajad dharim ॥ 34 ॥

अर्थ: इस प्रकार एकत्र किये गये धन से, युद्ध के पाप से भयभीत धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने तीन अश्वमेध यज्ञों द्वारा भगवान् हरि की आराधना की। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 34)

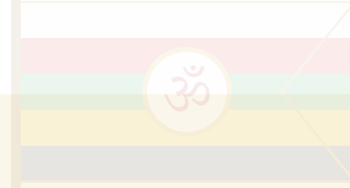


अश्वमेध यज्ञों के सम्पन्न होने के पश्चात् श्रीकृष्ण राजा और रानियों से विदा लेकर अर्जुन तथा यदुवंशियों के साथ द्वारका के लिए प्रस्थान करते हैं (श्लोक 36)।

राजा द्वारा आमन्त्रित भगवान् श्रीकृष्ण ने ब्राह्मणों की सहायता से यज्ञों का संचालन किया और फिर, अपने मित्रों और स्वजनों के आनन्द के लिए, कुछ मास उनके साथ रहे। अन्ततः, राजा, उनके भाइयों तथा द्रौपदी की अनुमति लेकर, वे अर्जुन को साथ लेकर और यदुवंश के प्रमुखों से घिरे हुए, पुनः द्वारका के लिए प्रस्थान कर गये।

ततो राज्ञाभ्यनुज्ञातः कृष्णया सह बन्धुभिः ।

ययौ द्वारवतीं ब्रह्मन् सार्जुनो यदुभिर्वृतः ॥ ३६ ॥



tato rājñābhyanujñātaḥ kṛṣṇayā saha-bandhubhiḥ । yayau dvāravatīm brahman sārjuno yadubhir vṛtaḥ ॥ 36 ॥

अर्थ: तत्पश्चात्, हे ब्राह्मण, राजा, द्रौपदी तथा अपने स्वजनों से अनुमति पाकर, वे अर्जुन को साथ लेकर और यदुवंशियों से घिरे हुए द्वारका के लिए प्रस्थान कर गये। (स्कन्ध 1, अध्याय 12, श्लोक 36)

प्रमुख शिक्षाएँ

1. जिनकी भगवान् रक्षा करते हैं, वे उन्हें पहले ही देख लेते हैं। एक भी श्वास लेने से पूर्व, परीक्षित ने उन भगवान् का दर्शन कर लिया था जिन्होंने उसकी रक्षा की (श्लोक 7-11)। कृपा प्रायः हमारी चेतना से पहले आ जाती है; भगवान् हमारे उन्हें पहचानने से बहुत पूर्व से ही उपस्थित एवं सक्रिय रहते हैं।
2. सांसारिक ऐश्वर्य ईश्वरार्पित हृदय को तृप्त नहीं कर सकता। युधिष्ठिर के पास आधिपत्य, सम्पदा, कीर्ति और देवताओं तक की अभिलषित समस्त भोग-सामग्री थी, फिर भी उनमें से किसी ने उन्हें आनन्द न दिया, क्योंकि उनका मन मुकुन्द में स्थित था (श्लोक 6)। जिस आत्मा ने भक्ति का रस चख लिया, वह केवल संसार से तृप्त नहीं होती।

3. एक पवित्र नाम आजीवन आशीर्वाद है। शिशु को दो नाम मिले — विष्णुरात, “विष्णु द्वारा दिया गया,” और परीक्षित, “परीक्षा करने वाला” — और प्रत्येक में एक सम्पूर्ण नियति समाई हुई थी (श्लोक 17, 30)। भक्ति में दिया गया नाम, हम जो कहलाते हैं, वही हमें गढ़ सकता है।
4. भक्ति पूर्वनिश्चित मृत्यु को भी मुक्ति में बदल देती है। ऋषियों ने भविष्यवाणी की कि परीक्षित अपनी मृत्यु का समाचार सुनकर, उससे भागने के बजाय, आसक्ति त्यागकर भगवान् की शरण लेगा और गंगा के तट पर अभय पद प्राप्त करेगा (श्लोक 27–28)। भक्ति में सामना की गई मृत्यु मुक्ति का द्वार बन जाती है।
5. खोजता हुआ हृदय भगवान् को सर्वत्र ढूँढ़ता है। परीक्षित प्रत्येक मिलने वाले व्यक्ति की परीक्षा करता, उस एक को खोजता जिसकी झलक उसने गर्भ में पाई थी (श्लोक 30)। सच्चा स्मरण भक्त को हर वस्तु और हर व्यक्ति में भगवान् के लिए व्याकुल बना देता है।
6. धर्मात्मा प्रायश्चित्त चाहते हैं, और भगवान् उनकी सहायता करते हैं। युद्ध के पाप से अब भी भयभीत युधिष्ठिर ने श्रीहरि को प्रसन्न करने हेतु तीन अश्वमेध यज्ञ किये, और स्वयं श्रीकृष्ण उनके सम्पन्न होने की देखरेख करने पधारे (श्लोक 34–35)। सच्चा पश्चात्ताप विनम्र हृदय की ओर भगवान् की सहायता खींच लाता है।

एक भक्तिमयी चिन्तन

इस विचार में कुछ गहन मार्मिकता है कि परीक्षित ने संसार से मिलने से पूर्व ही भगवान् से भेंट कर ली। दिन के प्रकाश से पहले, उसकी सर्वप्रथम दृष्टि श्रीहरि का वह गदा घुमाता, रक्षा करता रूप थी — और वही दर्शन उसके सम्पूर्ण जीवन का आकार बन गया। वह बड़ा होकर हर उस चेहरे की परीक्षा करता रहा जिससे वह मिला, उस एक को न भुला पाता जिसे उसने देखा था। हमें लग सकता है कि हम भगवान् के पास देर से आये, कि हमारे उनके बिना बीते वर्ष व्यर्थ गये। किन्तु यह अध्याय कोमलता से कुछ और ही संकेत करता है: भगवान् प्रायः हमारे सबसे असहाय क्षण में सबसे निकट होते हैं, हमारे भीतर अदृश्य रूप से कार्य करते हुए, एक ऐसी स्मृति बोते हुए जिसे पुनः पाने में हम शेष जीवन लगा देते हैं। भक्तिमय जीवन जीना, एक अर्थ में, परीक्षित के समान बन जाना है — हर व्यक्ति और हर परिस्थिति में उस प्रिय रूप को खोजते रहना जिसे हम अस्पष्ट रूप से स्मरण करते हैं, जब तक कि अन्ततः, अपनी ही किसी शान्त गंगा के तट पर, हम उन्हें पूर्णतः पा लें और फिर कभी भयभीत न हों।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, भगवान् के किसी एक पवित्र नाम को चुनिए — मुकुन्द, अच्युत, हरि, अथवा वह नाम जो आपको सर्वाधिक प्रिय हो — और उसी नाम से प्रत्येक क्षण का मौन अभिवादन कीजिए। जैसे परीक्षित ने देखे हुए उस एक को हर चेहरे में खोजा, वैसे ही अपने हृदय को दिन भर बार-बार सब वस्तुओं में छिपे भगवान् की ओर मोड़िए। जब कोई कठिनाई आए, तो स्मरण कीजिए कि वे ब्रह्मास्त्र की अग्नि में गर्भस्थ शिशु के साथ उपस्थित थे, और धीरे से उनका नाम उच्चारित कीजिए। यह अभ्यास छोटा और स्थिर रहे; आरम्भ के लिए इतना ही पर्याप्त है।

उपसंहार

इस प्रकार श्रीमद्भागवत का द्वादश अध्याय पूर्ण होता है, जिसे भगवत्प्राप्त महात्मा परमहंस-संहिता कहते हैं। इस अध्याय में, श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 12 में, हमने सुना कि किस प्रकार नैमिषारण्य के ऋषियों ने गर्भ में बचाये गये शिशु के विषय में पूछा; किस प्रकार उस शिशु ने अच्युत भगवान् के अङ्गूठे-मात्र, गदाधारी रूप का दर्शन किया जो ब्रह्मास्त्र की अग्नि को शान्त कर रहे थे; और किस प्रकार, एक शुभ घड़ी में,

वह पाण्डु के वंश को आगे ले जाने के लिए जन्मा। हमने देखा कि केवल कृष्ण में सन्तुष्ट राजा युधिष्ठिर ने स्तुतियों और दानों से उसके जन्म का स्वागत किया; हमने सुना कि ब्राह्मणों ने उसे विष्णुरात नाम दिया और गंगा-तट पर मुक्ति में समाप्त होने वाले, राम-सदृश सद्गुणों के जीवन की भविष्यवाणी की; और हमने जाना कि किस प्रकार संसार उसे परीक्षित कहने लगा, वह जो हर चेहरे में भगवान् को खोजता रहा। यह अध्याय युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञों और श्रीकृष्ण के द्वारका-प्रस्थान के साथ समाप्त होता है। जन्म से पूर्व से लेकर मृत्यु की घड़ी तक, परीक्षित का जीवन भगवान् की कृपा में समाया हुआ है — यह स्मरण कराता हुआ कि हमारे अपने जीवन भी उसी अटल प्रेम की गोद में पले हुए हैं।

श्रीमद्भागवतम् का यह दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (हिन्दी/अंग्रेज़ी), प्रथम स्कन्ध, द्वादश अध्याय, पुस्तक-पृष्ठ 46–48।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट। पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेख एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण भक्तिमयी पुनर्कथन है (कॉपीराइट मोड B)। किसी प्रकाशक का अनुवाद अथवा भाष्य उद्धृत नहीं किया गया है; “अर्थ” पंक्तियाँ मौलिक श्रद्धापूर्ण भावानुवाद हैं। यह लेख यह संकेत नहीं करता कि कोई प्रकाशक, पुस्तकालय अथवा संस्था इसे प्रायोजित अथवा अनुमोदित करती है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-1-chapter-12-birth-of-parikshit-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट